**ISSN Print:** 2394-7500
**ISSN Online:** 2394-5869
**Impact Factor:** 8.4
IJAR 2022; 8(1): 202-204
www.allresearchjournal.com
Received: 02-11-2021
Accepted: 11-12-2021

**लक्ष्मी प्रसाद शर्मा**
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, सरकारी संस्कृत महाविद्यालय, साम्दोंग, पूर्व सिक्किम, भारत

**Corresponding Author:**
**लक्ष्मी प्रसाद शर्मा**
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग सरकारी संस्कृत महाविद्यालय साम्दोंग पूर्व सिक्किम, भारत

# गद्य एवं खड़ीबोली हिन्दी के यात्रा में बाबू हरिश्चन्द्र'- एक अध्ययन

## लक्ष्मी प्रसाद शर्मा

**सारांश**
आधुनिक हिन्दी खड़ी बोली को भागिरथी प्रयास से गद्य के रुप में अलंकृत कराने वाले तथा ध्रूव प्रयास से विश्वपटल पर हिन्दी को समृद्दी प्रदान कराने हेतु पृष्टभूमि तैयार करने वाले माँ भारती के सपूत बाबू हरिश्चन्द्र को हिन्दी साहित्य जगत अति श्रद्धाभाव से स्मरण करता है। उन्हीं के प्रेरणा के चलते वर्तमान में हिन्दी अपनी मंजील की समीपता को प्राप्त करती हुई विश्वमंच में अपना वर्चश्व गरिमा के साथ स्थापित करने में सक्षम होती दिखाई दे रही है, इसका श्रेय इन आप्त पुरुषों को ही देना चाहिए मैं ऐसा मानता हूँ। हिन्दी की सोचनीय दशा और उर्दू-फारसी की प्रबलता के युग में भारतेंदू हरिश्चन्द्र का जन्म होना और स्वल्पायु में ही हिन्दी में विविध गधाओं को समृद्ध करना कितना संघर्षमय काल रहा होगा। यह महज संयोग ही नहीं हिन्दी साहित्य के लिए वरदान से किंचित कम नहीं। उक्त लेख में विद्वानों के मतों का सहारा लेकर भारतेन्दु के जीवन एवं साहित्य समृद्धि को दर्शाने का प्रयाश किया गया है।

**कूट शब्द:** गद्य एवं खड़ीबोली, भागिरथी प्रयास, बाबू हरिश्चन्द्र, हिन्दी साहित्य

### संक्षिप्त जीनव परिचय

भारतेन्दु सेठ अमीचन्द के वंश की चौथी पीढ़ी की सन्तान थे। इनके पूर्वज अंग्रेजों के पूरे वफादार थे। सेठ अमीचन्द का अंग्रेजों से व्यापारिक सम्बन्ध भी था,व्यापार में लाभ की सम्भावना देख कर ही वे कलकत्ता आ बसे थे, पर बाद में क्लाइण्ट ने इन्हें धोखा दिया जिसके सदमे से वे पागल हो गये थे। अन्तिम डेढ़ वर्ष उनके पागलपन में ही बीते। पिता का हस्र देखकर पुत्र फतेहचन्द ने पुनः सन् १७५९ में काशी में रहना निश्चिय किया। भारतेन्दु का जन्म काशी में हुआ। भारतेन्दु के परदादा थे फतेहचन्द। वैसे तो परदादा फतेहचन्द,दादा हर्षचन्द तथा पिता गोपालचन्द उपनाम गिरधरदास सभी अंग्रेजों के विश्वासपात्र रहे। किन्तु भारतेन्दु के पिता सजग, परिष्कृत विचार वाले विद्वान व्यक्ति के साथ ही प्रसिद्ध कवि, नाटककार और वैष्णव भक्त भी थे। पिता की वैष्णव भक्ति तथा कर्मठता और अद्वितीय ऊर्जा भारतेन्दु को विरासत में मिली थी। केवल २७ वर्ष की अवस्थ मेंरे पिता ने देह त्याग किया, किन्तु इसी अवसर में चालीस ग्रन्थ बनाए। (भारतेन्दु समग्र, पृष्ठ.५७५)

भारतेन्दु ने अपने पिता को भाषा का प्रथम नाटककार माना है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जन्म भाद्रपद ऋषि पंचमी संवत् १९०७ (९सितम्बर, सन्१८५० ई.) को सोमवार के दिन प्रातःकाल में हुआ था। राधाकृष्णदास ने भाद्रपद शुक्ल सप्तमी सं.१९०७ (९सितम्बर १८५०ई.) को इन का जन्म बताया है। पूत के पाँव पालने में दिखाई दे जाते हैं।इस कहावत को चरितार्थ करते हुए भारतेन्दु ने पाँच वर्ष की अवस्था में निम्न लिखित दोहे की रचना की-

लै ब्याड़ा ठाड़े भये, श्री अनिरुद्ध सुजान। बाणासुर की सैन्य को, हनन लगे भगवान।

भारतेन्दु ने अपनी अल्पायु में इस दोहे की रचना के अतिरिक्त अपनी प्रतिभा के अन्य अनेक प्रमाण भी दिये। साहित्यिक वातावरण इन्हें उत्तराधिकार में मिला था। इनके पिता गोपालचन्द्र उपनाम गिरिधरदास ब्रजभाषा के अच्छे कवि थे। वे परम धार्मिक वैष्णव थे। उनके बारे में प्रचलित है कि पाँच भक्ति पद बनाकर ही अन्न-जल ग्रहण करते थे। बालक हरिश्चन्द्र पर इसका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था।

डॉ.त्रिभुवन सिंह के अनुसार नौ वर्ष की अवस्था में भारतेन्दु का यज्ञोपवित संस्कार हुआ और इसके बाद ही उनके प्रिय पिता का देहान्त हो गया। भारतेन्दु की माता का देहान्त इससे चार साल पूर्व हो चुकी थी। तात्पर्य यह है कि भारतेन्दु की माता जी का देहान्त हुआ तब वे पाँच वर्ष के थे। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि भारतेन्दु को अपने बचपन में ही जीवन की सारहीनता का बोध हो चुका था। वे अपने माता-पिता के विछोड़ से निराश और व्याकूल नहीं हुए। इसके विपरीत उन्होंने एक विचित्र प्रकार की स्वतन्त्रता और निश्चिन्तता का अनुभव किया। यह मस्ती उन्में अपने जीवन के अन्त तक रही।

भारतेन्दु की शिक्षाः-भारतेन्दु की आरम्भिक शिक्षा घर पर ही शुरु हुई। आपको हिन्दी और संस्कृत पढ़ाने के लिए अच्छे विद्वान नियुक्त किये गये थे। मौलवी ताज अली आपको उर्दू और फारसी का अध्ययन कराते थे। पिता की मृत्यु के पश्चात आपका नाम काशीके क्वीन्स क़लेज में लिखवाया गया, पर वहाँ आपका मन नहीं लगा और आपने क्वीन्स कॉलेज छोड़ दिया

भारतेन्दु चार भाई – बहन थे- दो भाई और दो बहनें। भारतेन्दु की माता की मृत्यु के बाद पिता ने दूसरा विवाह किया था। विमाता की दोनों सन्तानों की मृत्यु हो गई थी।अपने छोटे भाई बाबू गोपालचन्द से इनका विशेष लगाव था। भारतेन्दु का विवाह सं. १९२० के अगहन महीने में शिवाले के रईस लाला गुलाब राय की पुत्री मन्नो देवी से हुआ था। [1] भारतेन्दु की तीन सन्तानें थीं- उनमें दो पुत्र थे, जिकी बचपन में ही मृत्यु हो गयी थी, पुत्री विद्यावती ही जीवित रहीं- जिसकी शादी भारतेन्दु जी ने बड़ी धूमधाम से की थी। भारतेन्दु कुल चौतीस वर्ष जीवित रहे। सन् १८८५ की ६ जनवरी रात्री पौने दस बजे की इनका देहान्त हुआ। भारतेंदु जीवनपर्यन्त कर्मरत रहे। अन्तिम समय में अपने रुग्ण होने की चर्चा उन्होंने अपने नाटक-निबन्ध (१८८५०के समर्पण में की है – "नाथ! आज एक सप्ताह होता कि मेरे समनुष्य जीवन का अन्तिम अंक हो चुकता।किन्तु न जाने क्या सोचकर और किस पर अनुग्रह करके उसकी आज्ञा नहीं डुई....। यद्यपि संसार के कुरोगों से मन प्राण तो नित्य ग्रस्त थे ही, किन्तु चार महीने से शरीर से भी रोगग्रस्त तुम्हारा हरिश्चन्द्र।"[2]

विवाह के बाद आपने जगन्नाथ पुरी की यात्रा की। सम्भवतः भारतेन्दु के परिवार में परम्परा रही हो। विवाह के पश्चात् पवित्र धाम की यात्रा कर मंगलमय वैवाहिक जीवन का शुभारम्भ करें।

डॉ. त्रिभुवन सिंह के अनुसार उनकी यह यात्रा महत्वपूर्ण रही, क्योंकि इसी यात्राक्रम में उनका परिचय बंगाल के कुछ नवीन कलाकारों से हुआ। उस समय बंगाल के सामाजिक,राजनीतिक तथा धार्मिक जीवन में नवीन चेतना का उदय हो चुका था, जिसकी अभिव्यक्ति साहित्य के रुप में हो रही थी। भारतेन्दु पर इसका प्रभाव पड़ा और परिणामस्वरुप उनकी सत्प्रेरणा से हिन्दी में नवयुगीन चेतना का आरम्भ हुआ। भारतेन्दु के मनमें अपने देश को देखने की बड़ी लालसा थी। वे सन्१८६६ में अर्थात् १६वर्ष की अवस्था में बुलन्दशहर, चुनार, लखनाऊ, मंसूरी, हरिद्वार, कानपुर, लाहौर, अमृसर, दिल्ली आदि की यात्रा पर गये।इस यात्रा के पश्चात् भआरतेन्दु ने अपनी साहित्यिक गतिविधी बड़ी तेजी से कर दी।अपनी १७वर्ष की अवस्था में ही उन्होंने "कविवचन सुधा" नामक पत्रिका का प्रकाशन किया,जिसमे आरम्भ में पुराने कवियों की ही कविताएं छपा करती थी,पर बाद में हिन्दी गद्य भी छपने लगा।

इन्होंने 'हरिस्चन्द्र मैगजीन' नामक एक और पत्रिका निकाली। आठ अंक निकालने के बाद इसका नाम बदल कर उन्होंने "हरिश्चन्द्र चन्द्रिका" कर दिया और इसी चन्द्रिका में ही हरिश्चन्द्र की परिमार्जित हिन्दी का प्रथम बार दर्शन हुआ। भारतेन्दु ने स्वयं स्वीकार किया कि हिन्दी नई चाल में ढली सन् १८७३ ई. में। [3]

**हरिश्चन्द्र जी को प्राप्त भारतेन्दु की उपाधि का रहस्यः-**

राजा शिव प्रसाद का जीवन काल सन् १८२३ से १८९५ ई. रहा। राजा शिवप्रसाद व्यक्तित्व और कृतित्व बहुत विवादस्पद रहा। वे एक ओर तो शिक्षा पद्धति में हिन्दी को सरकारी कामकाज में देवनागरी लिपि को स्थान दिलाने वाले माने जाते हैं तथा दूसरी ओर अग्रेज और अग्रेजी शासन के कट्टर समर्थक रहे। वे हिन्दी में उर्दू प्रधान गद्य लिखने के प्रबल हिमायती थे। राजा शिवप्रसाद पर यह लांछन भी लगाया जाता है कि उन्होंने हरिश्चन्द्र की राष्ट्रीयभावना के कारण उनके विरुद्ध अंग्रेज सरकार के कान भरे। इस प्रकार उन्होंने अंग्रेज सरकार को हरिश्चन्द्र का विरोधी बना दिया। प्रारम्भ में ये भरतपूर राज्य के वकिल थे,अंग्रेज सरकार ने इनके काम से प्रसन्न होकर इन्हें सरकारी शिक्षा विभाग में सरकारी नौकरी दी और राजा उपाधि प्रदान की। राजा शिवप्रसाद के अनुयायियों ने इन्हें "सितारेहिन्द" *उपाधि से नवाजा। सितारेहिन्द का अर्थ है –भारत का तारा। सितारेहिन्द के दोनों शब्द सितारे और हिन्द उर्दू भाषा के हैं। हिन्दी साहित्य और भारतीय देशभक्ति समर्थकों ने हरिश्चन्द्र को राजा शिवप्रसाद से उच्च,श्रेष्ठ और संस्कृतनिष्ठ हिन्दी* भाषा में "भारतेन्दु" की उपाधि प्रदान की। उसका अर्थ है- भारत का चन्द्रमा। तारे की अपेक्षा चन्द्रमा हजारों और लाखों गुना ही नहीं, करोड़ो और अरबों गुना विशाल होता है। भारतेन्दु के दोनों शब्द-भारत और इन्दु विशुद्ध संस्कृत भाषा के हैं। इनमें जो सन्धि हुई है-अ+इ=ए (भारतेन्दु) वह संस्कृत व्याकरण के पाणिनीय सूत्र आद्गुणः के अनुसार है। इस प्रकार हरिश्चन्द्र से पूर्व भारतेन्दु उपादी जुड़ने से इको भारतेन्दु हरिश्चन्द्र कहा जाने लगा है। [4]

भारतेन्दु जन्म से सम्पन्न, स्वभाव से उन्मुक्त और मनमौजी, बुद्धी से अत्यन्त जागरुक, सूक्ष्मद्रष्टा तथा हृदय से पूर्ण सम्वेदनशील व्यक्तित्व के स्वामी थे। उनके जीवन का एक मात्र लक्ष्य अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व को नि-शेष करके हिन्दी भाषा और उसके साहित्य को उन्नत, समृद्ध और बहुमुखी बनाना था। हिन्दी साहित्य को नवीन राष्ट्रीय चेतना से सम्पृक्त करना था। उनके निवास पर साहित्य साधकों की भीड़ लगी रहती थी, गोष्ठियाँ जमती थी, व्याख्यान दिये जाते थे, साहित्यिक रुपों और समस्याओं पर विचार-विमर्श होता था। भारतेन्दु इन सभी गतिविदियों के आयोजक और संचालक बने रहते थे। इसी विशेषता ने हरिश्चन्द्र को भारतेन्दु अर्थात् भारत का चन्द्रमा (इन्द्र) बना दिया था।

रामप्रसाद मिश्र ने भारतेन्दु की हिन्दी सेवा तथा काव्य साधना का विवेचन करते हुए लिखा है- हिन्दी भाषा की समस्याएँ अन्य भारतीय भाषाओं की अपेक्षा दुगुनी थी,जिनका सामना भारतेन्दु, प्रतापनारायण मिक्श्र, बालकृष्ण भट्ट आदि महान् साहित्य सेवकों ने ऐसे त्याग, धैर्य और पाण्डित्य से किया कि यदि ये महानुभाव कुछ न लिखते तब भी अमर हो जाते। भारतेन्दु के नेतृत्व ने हिन्दी गद्य को व्यवस्थित रुप प्रदान किया, हिन्दी कविता को शास्त्रीयकालीन सीमाओं एवं समाज परांमुकता से ऊपर उठाकर विस्तृत एवं सामाजिक भूमिका भी प्रदान की। इसके विरुद्ध होने वाले आक्रमणों को साहसपूर्वक विफल किया और इसे प्रतिष्ठा से, धन से, श्रम से, प्रचार से लोकप्रिय भी दिलाई। अपनी असाधारण मेधा, अपनी अप्रतिम भावुकता, अपनी सहजात सरलता, अपनी अकृत्रिम लोकनिष्ठा, अपनी निष्काम सेवा भावना, अपनी तलस्पर्शी देशभक्ति और अपनी अनुपम साहित्यसाधना में भारतेन्दु संसार साहित्य की एक असामान्य विभूति कहे जा सकते हैं। [5]

भारतेन्दु ने सर्वप्रथम कविता को देश और राष्ट्र से जोड़ने का कार्य किया। रीतिकाल में मानस का विस्तार धर्म से चलकर जाति तक ही पहुँचा था। उससमय यह नारा ही आधुनिकता का प्रतीक था- उठो, करो वीर स्वजाति का भला।

साहित्य की महत्ता की घोषणा भारतेन्दु के इन शब्दों में स्पष्ट की है-

अंधकार है वहाँ जहाँ आदित्य नहीं है।
मुर्दा है वह देश जहाँ साहित्य नहीं है।।

देश की जीवन्तता से साहित्य को जोड़ने वाले भारतेन्दु पहले कवि थे। अंग्रेजी राज्य की प्रशंसा के साथ ही उन्होंने भारत का धन विदेश अर्थात् इंग्लैण्ड चले जाने की निन्दा इन शब्दों में की –

अंगरेज राज सुख साज सबै सुख भारी।
पै धन विदेश चलि जात यहै बड़ि ख्वारी।।

भारतेन्दु के जीवन में भक्ति और प्रेम की प्रधानता थी। उनमें दोनों प्रकार की भक्ति-भावना थी- ईश्वरभक्ति और देशभक्ति। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हीन्दी के ऐसे पहले साहित्यकार हैं,जिन्होंने कविता को देशप्रेम अथवा देशभक्ति से जोड़ा। देशभक्ति की यह भावना उनके नाटकों में भी स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है।

एक देसभक्त के रुप में भारतेन्दु भारत की परतन्त्रता से तो पीड़ित थे ही, भारत में जो कुरीतियाँ चल रही थी और भारत की जो दुर्दशा थी उससे वे दुःखी थे। वैसे परतन्त्रता और दुर्दशता का एक-दूसरे से कार्य-कारण का दोहरा सम्बन्ध है।दूर्दशा के कारण परतन्त्र हुआ और परतन्त्रता के कारण भारत की दुर्दसा में वृद्दि हुई –ये दोनों बातें सत्य हैं।भारतेन्दु ने भारत की स्वाधीनता के सन्दर्भ में जिस सम्प्रदायिक सद्भाव का आह्वहान किया है वह उनकी व्यपक दृष्टि का प्रभाव है। देश की प्रगति सुख-शान्ति भाइचारे से ही सम्भव है। यही कारण है कि वे भारतीयों से निवेदन करते हैं-

*हिन्दू भाइयों ! तुम भी मत-मतान्तर का आग्रह छोड़ो। आपस में प्रेम बढ़ाओ। इस महामंत्र का जप करो।जो हिन्दुस्तान में रहे चाहे किसी रंग,किसी जाति का क्यों नहो, वह हिन्हू, हिन्दी की सहायता करो। बंगाली, मराठा, पंजाबी, मदरासी, वैदिक, जैन, मुसलमान सब एक का हाथ पकड़ो। कारीगरी जिसमें तुन्हारे यहाँ बड़े- तुन्हारा*

*रुपया तुम्हारे देश में रहे भाइयों! अब तो नींद से चौंको,अपने देश को सब प्रकार उन्नति करो।* [6]

भारतेन्दु के प्रेरणादायक व्यक्तित्व ने हिन्दी साहित्य में सर्वतोमुखी उन्नति का सूत्रपात किया। उन्नीसवीं शताब्दी के समाप्त होते-होते हिन्दी साहित्य में शक्तिशाली भाषा के सभी लक्षण प्रकट हो गये। इस समय तक अनेक अच्छे पत्र और पत्रिकाएँ प्रकाशित होने लगी थीं। भाषा के प्रश्न को भारतेन्दु ने आज से सौ वर्ष से भी पहले सूक्ष्मता से समझ लिया था। अनेक बड़े-बड़े विचारक इस सहज-सी बात को उनके बाद भी सहज ढंग से नहीं सोच सके हैं। अपनी भाषा की उन्नति की सभी उन्नति को सभी उन्नतियों का मूल कारण होने की घोषणा भारतेन्दु ने की थी-

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
पै निज भाषा ज्ञान बिनु, मिटै न हिय को सूल।।

यह पंक्ति अपने आप में स्पष्ट है कि अपनी भाषा के विकास से ही अन्य भाषाओं की गरिमा को समझा जा सकता है। जितने भी संगोष्ठी किये जाय, किन्तु निज भाषा के उन्नति हेतु हमारी कलम नहीं दौड़ती बकत सारी मेहनत पानी में चली जाएगी। यह बात उत ही नहीं अपितु ध्येय वाक्य आप्तवाक्य भी है.विश्व जब भी भाषा पर संघर्ष करेगा भारतेन्दु की उक्त वाक्य सभी को अवश्यमेव मार्गनिर्देश करने में अति अहम भूमिका निभाएगा जिसे नकारा नहीं जा सकता।

**संदर्भ सूची**


1. ब्रजरत्नदास, भारतेन्दु हरिस्चन्द्र, पृष्ठ.६५
2. भारतेन्दु समग्र, पृ।ठ-५५६ हिन्दी साहित्य का वस्तुनिष्ठ इतिहास, खण्ड्-द्वितीय, लेखिका-डॉ.कुसुम राय,पृ.५४
3. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एक विसेष अध्ययन, पृष्ठ-३२, लेखक-डॉ. गंगा सहाय प्रमी, हरिश विश्वविद्यलय प्रकाशन, आगरा-२८२००३(उ.प्र)
4. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एक विसेष अध्ययन, पृष्ठ-१२, आलोचनाभाग, लेखक-डॉ.गंगा सहाय प्रमी, हरिश विश्वविद्यलय प्रकाशन, आगरा-२८२००३(उ.प्र)
5. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एक विसेष अध्ययन, पृष्ठ-१२-१३-४, लेखक-डॉ.गंगा सहाय प्रमी, हरिश विश्वविद्यलय प्रकाशन, आगरा-२८२००३(उ.प्र)
6. निबन्ध और विविध गद्य, डॉ.राजेन्द्र मिश्र, डॉ.देवीसिंह राठौर, भारतेन्दु युग-निबन्ध-सृजन और शिल्प-पृष्ठ-३४